International Journal of Humanities and Social Science Invention
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org Volume 2 Issue 1 ||| January. 2013 ||| PP.77-79

''महर्षि अरविन्द, वर्तमान शिक्षा के अधिष्ठाता के रूप में ''

डॉ0 जितेन्द्र बहादुर सिंह
एसो0 प्रो0 – राजनीति विज्ञान
पं0 राम लखन शुक्ल राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
आलापुर, अम्बेडकरनगर, उ0प्र0

शब्दावली – चिरकाल, सतयुग, अहंकार, अनुष्ठान, कलश, शैशवकाल, इन्द्रियनिषेध, अध्यात्मिकता, विषंतर, भौतिकतावाद, सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे सन्तुनिरामया, अंधकार, भौतिक, मानवीय, अध्यात्मिक, संस्कार, संस्कृति, हस्तशिल्प, अलौकिक, विश्व शांति, आधृत, अचेतन, अतिमानस, ज्ञान, गत्यात्मक, संवेगात्मक, सौंदर्यात्मक, युगांतकारी, अभ्युदय, निवर्तन।

शोध सारांश

अरविन्द जी का भारतीय शिक्षा चिन्तन में महत्वपूर्ण योगदान है। आपने ही सर्वप्रथम घोषणा की कि मनुष्य को सांसारिक जीवन में भी दैवी शक्ति को प्राप्त कराया जा सकता है। उनका मानना था कि मानव भौतिक जीवन व्यतीत करते हुए तथा अन्य लोगों की सेवा करते हुए अपने मानस को 'अति मानस' तथा स्वयं को 'अति मानव' में परिवर्तित कर सकता है। यह शिक्षा द्वारा यह संभव है।

आज की वर्तमान परिस्थितियों में जहां प्राचीन सभ्यता, संस्कृति एवं परपरा को पीछे छोड़कर भौतिकवादी सभ्यता क अंधानुकरण करते जा रहे हैं, वहां श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन हमें सही दिशा का निर्देश कराता है। आज धर्मिक एवं अध्यात्मिक जागृति नितान्त जरूरी है। इस दृष्टिकोण को हमें शिक्षा में अपनाना चाहिए। अरविन्द के दर्शन का लक्ष्य ''उदान्त सत्य का ज्ञान'' है जो ''समय जीवन–दृष्टि'' द्वारा प्राप्त होता है। ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण द्वारा मानव 'अति मानव' बन जाता है अर्थात् वह सत, रज व तम की प्रवृत्ति से ऊपर उठकर ज्ञानी बन जाता है। अतिमानव की स्थिति में व्यकित सभी प्राणियों को अपना ही रूप समझता है। जब व्यक्ति शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक दृष्टि से एकाकार हो जाता है तो उसमें दैवी शक्ति क प्रादुर्भाव होता है। समग्र जीवन–दृष्टि हेतु अरविन्द ने योगाभ्यास पर अधिक बल दिया है। योग द्वारा मानसिक शांति एवं संतोष प्राप्त होता है। अरविन्द ने मस्तिष्क की धारणा स्पष्ट करते हुए कहा है कि मस्तिष्क के विचार–स्तर वित, मनस, बुद्धि तथा अर्न्तज्ञान होते हैं जिनका क्रमशः विकास होता है। अर्न्तज्ञान में व्यक्ति को अज्ञान से संदेश प्राप्त होते हैं जो ब्रह्य ज्ञान के आरम्भ की परिचायक है। अरविन्द ने अर्न्तज्ञान को विशेष महत्व दिया है। अर्न्तज्ञान द्वारा ही मानवता प्रगति की वर्तमान दशा को पहुँची है। अतः अरविन्द का आग्रह है कि शिक्षक को अपने शिष्य की प्रतिभा का नैत्यिक–कार्य द्वारा दमन नहीं करना चाहिए। वर्तमान शिक्षा पद्धति से अरविन्द का असंतोष इसी कारण था कि उनमें विद्यार्थियों की प्रतिभा के विकास का अवसर नहीं दिया जाता। शिक्षक को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विद्यार्थियों की प्रतिभा के विकास हेतु उनके प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

अरविन्द की मस्तिष्क की धारणा की परिणति 'अतिमानस' की कल्पना व उसके अस्तित्व में है। अरविन्द का अतिमानस चेतना का उच्च स्तर है तथा दैवी आत्म शक्ति का रूप है। अतिमानस की स्थिति तक शनैः शनैः पहुँचना ही शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए। संक्षेप में अरविन्द के शब्दों में – ''भारतीय आध्यात्मिक ज्ञान जैसी उत्कृष्ट उपलब्धि बगैर उच्च कोटि के अनुशासन के अभाव में संभव नहीं हो सकती जिसमें कि आत्मा व मस्तिष्क की पूर्ण शिक्षा निहित है।''

शोध पत्र

युग को ऐसी वस्तु नहीं, जो एक नियत समय पर ही आएगी और फिर चिरकाल के लिए दृष्टिपथ से ओझल हो जाएगी। जब मनुष्य इस जाग्रत जीवन के अधिकार को भूलकर सूक्ष्म स्थन पर पहुंच जाता है, वासना, कमना, संस्कार आदि से नाता तोड़ लेता है। उसी समय सतयुग का पुनः उदय हो जाता है। इस समय पृथ्वीतल पर रहने वाली मानव जाति बुद्धि, मन और शरीर को ही सर्वप्रधान मानती है। इसलिए आज हमें नए सिरे से अनुष्ठान करना होगा। शक्ति के पुनः जगाना होगा। अहंकार का सिर हमें नीचा करके रखना होगा। हम दिव्यलोक के अधिकारी हैं, वास्तुतः ज्ञान रूप ी अमृत क कलश संसार में अमरलोक उजागर करेंगे।

पश्चात् तथा अन्यान्य वैदेशिक चिंतन धारा और शिक्षा के प्रभाव से भारत में जड़वाद का विस्तार तथा प्रचार हुआ। ऐसे में परिपूर्ण प्रगतिवादी शिक्षा दर्शन का प्रादुर्भाव हुआ। जिसमें श्री अरविन्द ने कहा मानव के समक्ष एक ऐसी आशा की वार्ता रखनी चाहिए जिससे कि वह अपने देवत्व को फिर से अनुभव कर सके और अपने पूर्ण विकास का प्रयत्न कर सके। आध्यात्मिक शिक्षा शैशवकाल से मनोवृत्ति का उपयुक्त विकास, साथ युक्त मानवता, पूर्णज्ञान की शिक्षा का प्रर्दशन, विचारणीय है जिसमें जड़ पदार्थ और आत्मा, जीवन और मानस की वास्तविक सत्ता है, जो सामंजस्य पूर्ण ढंग से कार्य करती हैं। इसमें इंद्रिय निषेध असंभसव है। अतएव उक्त के प्रकाश में निम्न का रूपांतरण और परिवर्तन द्वारा ही उसे प्राप्त किया जा सकता है।

इन्द्रियों की तृप्ति मन के ऊपर निर्भर करती है। मन की तृष्टि में इंद्रियों ी तृप्ति संभव है। म नही इंद्रियों क नियामक, नियंत्रक एवं संचालक है। प्रखर व्यवस्था इंद्रियों को नियंत्रित करता है। दुर्बलता इंद्रियों का दास बनाती है। आध्यात्मिकता विषयांतर व्यवस्था में मानसिक, दैहिक एवं सार्वजनिक व्यवस्था की कल्पना करता है। अपितु आध्यात्मिक विकास हेतु भौतिकतावाद को अस्वीकार नहीं करता चूंकि उपार्जन में लगे बहुत सारे लोगों का श्रम, समय एवं ऊर्जा लगी रहती है। इसके वितरण में विचारों क ध्यान रखना आवश्यक है। श्री अरविन्द आश्रम तथा शांतिकुंज में देखा जा सकता है, जहां पर एक श्रमिक एवं इंजीनियरों दोनों को उसकी आवश्यकता के अनुरू पसाधन, धन एवं संसाधन उपलब्ध कया जाता है। आध्यात्मिक भौतिकवाद तो एक सम्यक एवं समग्र दृष्टिकोण है जो 'सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे सन्तुनिरामया' का स्वास्तिक कल्याण का उद्घोष करता है। इसीमें व्यैक्तिक विकास, सामाजिक समरसता एवं राष्ट्र का विकास सन्निहित है। आध्यात्मिक भौतिकतावाद ही आज सर्वोपरि साधन है।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि प्रत्येक बालक संसार का प्रकाश है। इसके विपरीत यदि वह संसार का प्रकाश नहीं बनता है, तो वह संसार में अंधकार फैलाने क कारण बनता है। इसलिए आज की उद्देश्यहीन शिक्षा को उददेश्यपूर्ण बनाने की दिशा में सबसे अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। शिक्षक एवं अभिभावकों के मिले–जुले प्रयास के द्वारा बालक को नेक और चुस्त बनाने क प्रयास होना चाहिए। चूंकि संपूर्ण शिक्षा तीन प्रकार की होती है। – (क) भौतिक (ख) मानवीय (ग) आध्यात्मिक। भौतिक शिक्षा का संबंध शारीरिक उन्नति तथा विकास से होता है। यह उसका अवलम्ब उसकी भौतिक सुख सुविधा उपलब्ध कराती है।। यह शिक्षा बनुष्य और जानवर में समान रूप से पाई जाती है। इसी क्रम में संस्कार, प्रशासन, हस्तशिल्प, आविष्कार ये मनुष्य की अत्यंत उपयोगी गतिविधियां हैं तथा पशुओं से अलग और विशिष्ट है। आध्यात्मिक व्यवस्था में शिक्षा को दिव्य स्वरूप प्रदान किया गया है। यह मानव लक्ष्य का निर्माण करें यही उसका लक्ष्य है।

प्राचीन काल से शिक्षा का आधार आध्यात्मिक शिक्षा है। शिक्षा के सिद्धांत ईश्वर की एकता तथा ामनव जाति की एकता है शिक्षा की दृष्टि यह है कि प्रत्येक बालक विश्व का प्रकाश एवं मानवजाति गौरव है। ऐसी दशा में प्रारंभिक अवस्था से ही हमें उत्पन्न करने की जरूरत है, कि संपूर्ण पृथ्वी एक देश है तथा मानवता उसकी नागरिक हैं यह विश्व शांति की ओर बढ़ने का मानव जाति का पहला कदम है। हमें अपनी सारी शक्ति मानवता को उच्च आध्यात्मिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए लगाना चाहिए। मनुष्य को शांति तथा भाईचारे के साथ रहना सीखने के लिए ईश्वर का ज्ञानन प्राप्त करना चाहिए। स्कूल तथा घर विश्वमाज का एक छोटा रूप है।

अरविन्द विश्व की उत्पादिका, पोषिका, शक्ति, सम्पन्नता, गृहस्थ आश्रम की मूल संचालिक महिलाओं की कार्यकुशलता, सदाचरण, सुशिक्षा एवं बुद्धिमत्ता पर विश्व मानव समाज क स्वरूप आघृत होता है। उक्त गुणों से संचालित नारियां ही सभी तथ्यों को टीक–ठाक समझकर संपूर्ण परिवार के सदस्यों से सद्व्यवहार करती हुई उसे सुसंस्कृति एवं सुसभ्य बनाकर परिवार की अभियुक्त करती है। ऐसे ही शैक्षिक प्रभाव की गुणवत्ता से ग्राम, राष्ट्र एवं विश्व का समुन्नत हो सकता है। शिक्षा की दृष्टि अपने व्यक्तिगत जीवन में परिवर्तन लाना होना चाहिए। वास्तविक जीवन में सीखने के चक्र के फलस्वरूप हमें अनेक क्षमताएं प्राप्त होती है। इन क्षमताओं में अचेतन मन की खोज, निर्णय, नयें अनुभव की प्राप्ति तथा समझदारी में वृद्धि शामिल। हमें इन पद्धतियों को अपने प्रशिक्षण के दौरान अपनाना चाहिए। इसी से देश का, मानव का एवं विश्व बंधुत्व की भावना का विकास हो सकता है।

ऐसी व्यवस्था में श्री अरविन्द के पूर्णयोग की अवधारणा मानवता एवं विषयांतर दिव्य जीवन की परिकल्पना साकार करना अनिवार्य है। तदनन्तर अति मानस का अवतरण ही उनके पूर्णयोग का अंतिम ध्येय, प्रयोजन है। यह सभी अंशों पूर्ण है तथा इसमें सभी तथ्यों को पूर्ण स्थान मिल गया है। इसमें एक पुण्यतर वाणी है, जिसमें आध्यामिकता के त्याग के तथा जड़वाद के भोग के आदर्श की। यहां योग में त्यागवाद तथा भेगवाद में द्वंद दिखलाई पड़ता है। पुरूष को हमें भी प्राप्त करना पड़ेगा।

मानव जीवन की अंतिम सार्थकता अति मानस या दिव्यजीवन ही है। यह हमारा अंतिम लक्ष्य है, मानव जीवन की चरम सार्थकता है। सर्वथा आत्मिक और एकत्व पूर्णता की नयें जीवन और नई संस्कृति की सृष्टि करेगा, अपने अनुकूल और अनूरूप एक नया सामाजिक वातावरण पैदा करेगा, वह निश्चय और आनंदमय होगा।

हमारा संपूर्ण ब्रह्मांड पृथकतावाद की छाप को लगाए हुए हैं। चेतना का मुख्य भाग वैभियता को स्वीकार कर एकता के खो चुका है, यह संसार शारीरिक, शैक्षणिक, भौतिक दृष्टिकोण से गत्यात्मक हैं। स्वस्थ शरीर के होत` हुए भी, एक दृढ़ प्राणिक शक्ति और शक्रिय मन तथा उनके क्रिया व मनोरंजन का क्षेत्र केवल निकट संबंध नहीं लाता वरन उसमें आत्मप्राप्ति तथा उन्नत की भावना उत्पन्न करता है।

मानव जीवन क प्रत्येक भाग, उसके सभी शारीरिक, प्राणिक, गत्यात्मक, संवेगात्मक, सौंदर्यात्मक, नैतिक, बौद्धिक, आत्मिक क्रियाएं एक ऐसे मार्ग का अन्वेषण करें गी जिसमें वह आत्म प्राप्ति कर सके तथा धनी, पूर्ण तथा खुशी जीवन का साधन बन सके। शिक्षा सभी क्षेत्र में आए सभी प्रकार के शान का स्वागत करती हैं। गांधीजी के अनुसार ''शिक्षा का उददेश्य व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना, व्यक्ति की बुद्धि, भावना और धर्म में समन्वय लाना है। जीवन की सफलता समाज की उपयोगिता पर ही निर्भर है।''

स्वतंत्रता मानव विकास का साधक है। शिक्षा का व्यावहारिक स्वरूप सदैव प्रगतिशील एवं लचीला होना चाहिए। इनकी शिक्षा वर्तमान एवं प्राचीन के संदर्भ में शारीरिक तथा आत्मिक विज्ञान का अनुसरण करेंगी परन्तु यह केवल संसार और प्रकृति तथा मानव के भौतिक लक्ष्य के प्रयोग के विषय में भी शान नहीं प्राप्त करायेगी। बल्कि इन चीजों के माध्यम से, इनके अंदर इनमें तथा इनसे ऊपर संसार में दिव्यता का शान प्राप्त करायेगी।

इसी प्रकार श्री अरविन्द द्वारा व्यक्तकर्त्ता का उददेश्य केवल आत्मगत तथा वस्तुगतसंसार के वर्तमान प्रतिबिब ही नहीं होगा बल्कि इन प्रतिबिंबों को महत्वपूर्ण तथा सृजनात्मक दृष्टि के सथ दिखलाना भी इसका उददेश्य होगा जो कि अपने प्रकार रूप से परे चला जाताहै। स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा को वेदांत से जोड़ने का प्रयास किया है। राष्ट्रीय शिक्षा ही प्रगति का आधार हैं। सर्वधर्म समन्वय के अन्तर्गत स्त्री पुरूष दोनों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए अनिवार्य व्यवस्था के पक्षधर थे। नीतिशास्त्र का उददेश्य केवल नीति बनापना ही नहीं बल्कि मानव जाति या प्राणी में दैवी प्रगति को विसित कना हे। यह विकास चेतना का अंतः करण से स्वतंत्र तथा स्वतः स्फूर्ति प्रकटीकरण है। यह दबाव दमन में नहीं अग्रसर हो सकता। व्यक्ति तथा समाज में कोई ऐसा विषय नहीं है जो परतंत्रता तथा दास का दमन करना चाहता है। उददेश्य की प्राप्ति हमेशा विस्तृत वातावरण में ता उच्चतम प्रकाश में ही करना पड़ेगा, यह श्री अरविन्द का दावा है।

वर्तमान प्रगतिवादी, संशयवादी युग में अर्थशास्त्र का उददेश्य संपूर्ण ामनव को उसकी प्रकृति के अनुसार कार्य का आनंद प्रदान करना तथा आंतरिक रूप से विकास करने के लिए अवकाश प्रदान करना है। साथ ही साथ प्रत्येक के लिएसामान्य रूप से धनी तथा सुंदर जीवन की व्यवस्था करना है। मानव तथा राष्ट्र दोनों ही आत्माओं या सामूहिक आत्माओं से संबंधित होंगें। तथा इस प्रकार के कार्य संपूर्ण मानव जाति को दिव्य आत्मा की प्राप्ति में सहायक होना तथा आंतरिक एवं बाह्य जीवन और बाह्य प्रकृति में महान, विस्तृत, गूढ़ संभवनाओं को आध्यात्मिक, मानसिक, प्राणिक तथा भौतिक रूप से प्राप्त करेगा।

आज के संसार के लिए अति आवश्यक है, जबकि संपूर्ण ब्रह्मांड भौतिक बनता जा रहा है। वर्तमान ही सब कुछ है, इस भावना से मानव में ईर्ष्या, क्लेश, द्वंद की वृद्धि होती जा रही है। इस प्रकार हमारे विचार से जो राष्ट्र भविष्य के इस दृष्टिकोण स्वीकार करेगा संसार को नवीन दृष्टि दे सकेगा। भौतिकता, आध्यात्मिकता एवं धार्मिक विषयों में समन्वय करेगा, वह राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय जीवन में इसे एक जीवित आदर्श का प्रतीक स्वरूप नए युक क नेता बनेगा।

श्री अरविन्द का दृष्टिकोण आशावादी है। कारण दुख और ताप को उन्होंने अस्वीकार नहीं किया है, वरन यह बताया है कि यह विकास की अपूर्ण अभिव्यक्ति है तथा चैतन्य के उत्तरोत्तर विकास और आत्मज्ञान की प्राप्ति के साथ दुख, कष्ट का स्वरूप बदल जाता है। विकास जब समाप्त हो जाएगा तब यह सर्वथा–सर्वथा के लिए नष्ट हो जाएगी और इसकी चेतना प्राप्त हो जाएगी कि आनन्द एकमात्र सत्ता है।

अरविन्द की विकासवाद के क्षेत्र में एक युगांत कारी एवं क्रांतिकारी धारणा यह है कि क्योंकि दैवी निवर्तन के विकास संभव नहीं है। विकास केवल शरीर, जीवन तथा मानस क ही नहीं वरन आंतरिक जीवन का भी रूपांतरण हैं। यही वह वाणी है जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता है। विकास के अन्तिम स्तर पर अतिमानस का अभ्युदय होगा – यह एक नवीन संदेश है। आज मैं भी श्री अरविन्द को ही वह प्रथम व्यक्ति मानता हूं जिन्होंने यह घोषित किा कि इस जीवन में देवत्व को प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु क्रम विकास द्वारा मानव जब मानसिक उन्नति के स्तर को पार कर जाता है तब पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए अतिमानस के अवतरण का ही एकमात्र आवश्यकता रह जाती है। वस्तुत अतिमानस के अवतरण के साथ यह ज्ञान प्राप्त हो जाता है कि विश्व सृष्टि की प्रत्येक वस्तु के साथ मानव क एकत्व है। ऐसी स्थिति में वेद के इस वाक्य से तत्वशभानि का अर्थ प्रकट हो जाता है।

अतएव सफलता प्राप्ति के लिए बालक को उसके शैक्षिक काल से ही उपयुक्त मनोवृत्ति के विकास के लिए शिक्षा देनी चाहिए तथा ऐसी शिक्षा वैदिक काल की आश्रम पद्धति द्वारा ही संभव हो सकती है। साथ ही साथ मानव मन में मानव एकता तथा मानव मात्र का ही आत्मज्ञान का अधिकार है। इसी क्रम में स्वामी विवेकानंद जी ने अपना विचार प्रकट किया। स्वामी जी शिक्षा के द्वारा मनुष्य को लौकिक एवं पारलौकिक दोनों जीवन के लिए तैयार करना चाहते थे। प्रत्येक मानव चिन्मनय तत्व का प्रकाश है। अतः उसका सार्वभौमिक विकास करके साहस, स्पष्टवादिता, आत्मविश्वास और निर्भिकता जैसे गुणों का विकास करना चाहिए। अतः उन्होंने नैतिक उददेश्य को शिक्षा का मूल स्तंभ स्वीकार किया जो समस्त मूल विचारों औरअनुभूमियों का प्रच्छन्न आश्रय बन सके।

संदर्भ ग्रंथावली

01. आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन – विश्वनाथ वर्मा, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाषक, आगरा उ0प्र0
02. राजनीत और दर्षन – विश्वनाथ वर्मा, हिन्दी राष्ट्रभाषा परिषद, पटना
03. भारतीय संस्कृति : धर्म एवं दर्शन – डॉ0 शशि शर्मा एवं डॉ0 सुषमा देवी, विद्यानिधि प्रकाषन, 1 जनवरी 2018
04. भारतीय राजनीतिक चिंतन – जीवन मेहता, साहित्य भवन पब्लिषर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा0) लि0
05. आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन – डॉ0 अमरेश्वर अवस्थी और डॉ0 राम कुमार अवस्थी, रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर/नई दिल्ली, 2000
06. रमाकांत दुबे : विश्व के कुछ महान शिक्षाशास्त्री, मीनाक्षी प्रकाशन, दिल्ली
07. जायसवाल, सीताराम : शिक्षा दर्शन, प्रकाशन केंद्र, लखनऊ
08. आगामी कल की ओर, श्री अरविन्द सोसाइटी, पांडिचेरी
09. अग्रवाल, अर्चना : एजुकेशनल पॉट ऑफ श्री अरबिंदो
10. weblink-https://www.gkexams.com/ask/38012-Arvind-Ghosh-ka-Shiksha-Darshan
11. Web link – https://youtu.be/vtZmlHxM98w
12- Web link- https://youtu.be/4PXQF3oQeeM